International Journal of Humanities and Social Science Research
ISSN: 2455-2070; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 23-06-2019; Accepted: 26-07-2019
www.socialsciencejournal.in
Volume 5; Issue 5; September 2019; Page No. 118-121

डॉ. राममनोहर लोहिया: धर्म-संस्कृति और इतिहास

अजीत कुमार
असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, मोतीलाल नेहरु कॉलेज (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय, भारत

प्रस्तावना

धर्म सभ्यता एवं संस्कृति की उन्नति में एक सहायक कारण है। इसलिए आदिम-काल (primitive phase) से ही धर्म मानवतावाद के रूप में परिवर्तित हुआ है। इससे से ही मानव सामाजिकता के बन्धनों का अनुभव करता है, और इस तरह एकता एवं समग्रता के लक्ष्य को प्राप्त करता है। धर्म में निहित आचार और नैतिकता की धारणाओं से मानव मन को शांति, स्थिर-भाव, सहिष्णुता, प्रेम, श्रद्धा आदि भावनाओं को सुदृढ़ता तो मिलती है, साथ ही सामाजिक एवं नैतिक व्यवस्था तथा एकता की धारणा को भी बल मिलता है। धर्म मानव जीवन में आकस्मिकता से उत्पन्न अस्थायित्व की भावना को दूर हटाकर स्थायित्व एवं दृढ़ता को पनपाता है। धर्म की उपयोगिता, प्रसांगिकता इसी स्थायित्व के बोध में है, जिसका विस्तृत उल्लेख डॉ. राममनोहर लोहिया अपने विचारों के माध्यम से करते हैं। वे धर्म के माध्यम से भारत की चारों दिशाओं उत्तर-दक्षिण, पूर्व-पश्चिम की एकता का विस्तृत वर्णन करते है। डॉ. लोहिया धर्म के माध्यम से किस प्रकार जाति-विहीन तथा वर्ग-विहीन समाज की स्थापना की जा सकती है, के साथ-साथ इस प्रश्न पर भी विचार-विमर्श किया क्यों सभी धर्मों में हिंदू-धर्म श्रेष्ठ है? इसके अतिरिक्त क्यों डॉ. लोहिया को भारतीय इतिहास की जड़ अपरिवर्तनशील प्रतीत होता है? इस शोध-प्रबंध का मुख्य-उद्देश्य यह है कि किस तरह डॉ. राममनोहर लोहिया भारतीय धर्म-संस्कृति और इतिहास को वर्तमान संदर्भ में व्यवहारिक पक्ष प्रदान करते हैं। जिससे कि धर्म को सिर्फ आत्मा, परमात्मा तक ही सीमित नहीं रखा जाय, बल्कि इसे मानव-प्राणी के कल्याण और लौकिक समृद्धि के साथ भी जोड़ा जाए।

डॉ. लोहिया: मर्यादित, उन्मुक्त और असीमित व्यक्तित्व

बीसवीं सदी के अंतिम दशक में जिस व्यक्ति के विचारों ने आज की राजनीति को सबसे अधिक प्रभावित किया है, उनमें डॉ. लोहिया का नाम प्रमुख है। हिंदू-धर्म और हिंदू-संस्कृति के मर्म की जितनी जानकारी डॉ. लोहिया को थी, उतनी जानकारी अपेक्षाकृत कम लोगों को है। राम, कृष्ण और शिव पर लिखी पुस्तक "मर्यादित, उन्मुक्त और असीमित व्यक्तित्व" इसका उदाहरण है। वह मानते थे कि तीनों व्यक्तित्व (राम, कृष्ण और शिव) तीन जीवन-शैलियों के प्रतीक है। जो कि भारत की चारों दिशाओं- उत्तर-दक्षिण, पूर्व-पश्चिम की एकता के परिचायक है। डॉ. लोहिया लिखते है कि "राम और कृष्ण और शिव हिंदुस्तान की उन तीनों चीजों में हैं- मैं उनको आदमी कहूँ या देवता, इसके तो खास मतलब नहीं होंगे- जिनका असर हिंदुस्तान के दिमाग पर ऐतिहासिक लोगों से भी ज्यादा है। गौतम बुद्ध या अशोक ऐतिहासिक लोग थे। लेकिन उनके काम के किस्से इतने ज्यादा और इतने विस्तार में आपकों नहीं मालूम हैं, जितने कि राम और कृष्ण और शिव के किस्से। कोई आदमी वास्तव में हुआ या नहीं, यह उतना बड़ा सवाल नहीं है जितना यह कि उस आदमी के काम किस हद तक, कितने लोगों को मालूम है, और उनका असर है दिमाग पर। यह छोटे-छोटे सवाल हैं कि राम और कृष्ण और शिव सचमुच इस दुनिया में कभी हुए या नहीं? असली सवाल तो यह है कि इनकी जिंदगी के किस्सों के छोटे-छोटे पहलू को भी 5,10,20,50 हजार आदमी नहीं बल्कि हिंदुस्तान के करोड़ों लोग जानते हैं।" [1] आगे और विस्तृत ढ़ंग से इन तीनों व्यक्तित्व के व्यवहारिक पक्ष की चर्चा करते हुए लिखते है कि "लोगों के दिमाग पर असर सिर्फ इसलिए नहीं है कि उनके साथ धर्म जुड़ा हुआ है। असर इसलिए है कि वे लोगों के दिमाग में एक मिसाल की तरह आ जाते हैं, और जिंदगी के हरेक पहलू और हरेक काम-काज के सिलसिले में वे मिसालें आँखों के सामने या दिमाग की आँखों के सामने खड़ी हो जाती है। तब, चाहे जान-बूझकर, और चाहे अनजाने में, आदमी उन मिसालों के मुताबिक खुद भी अपने कदम उठाने लग जाता है। अगर मिसाल सोच-समझकर दिमाग के सामने आए तो उसका इतना असर नहीं पड़ता जितना बिना सोचे दिमाग में आ जाए। बिना सोचे कोई मिसाल दिमाग में आ जाए, सिर्फ यही नहीं कि वह मिसाल हो, बल्कि छोटे-छोटे किस्से भी याद हैं जैसे कि राम ने परशुराम को क्या कहा और किस वक्त कब कितना कहा- यह एक-एक किस्सा मालूम है। या जब भरत आए राम को वापस ले जाने के लिए तब उनकी आपस में क्या-क्या बातें हुई- इन सबकी एक-एक तफसील, इसने यह कहा, और उसने वह कहा, मालूम है। इसी तरह से कृष्ण और अर्जुन की बातचीत और इसी तरह से शिव के किस्से हिन्दुस्तानी के दिमाग की सतह पर खुदे हुए रहते हैं। एक तो हुआ किस्सों का मालूम होना, दूसरे-किस्सों का दिमाग की सतह पर खुद जाना, तो फिर वह हमेशा मिसाल की तरह दिमाग की आँखों के सामने रहते हैं, और किसी भी काम पर उनका असर पड़ा करता हैं।"[2]

यहाँ हम यह कह सकते है कि डॉ. लोहिया जिस प्रकार से राम, कृष्ण और शिव को लोगों के जीवन की व्यवहारिकता के रूप में दर्शा रहे है, क्या हम उन व्यवहारिकता को शैक्षणिक आधार प्रदान कर और व्यापक बना सकते हैं? जिससे लोगों के जीवन के व्यवहारिक पक्ष को आदर्श प्रदान किया जा सके और धर्म की व्याख्या को और अधिक प्रासंगिक बनाया जा सके। क्योंकि डॉ. लोहिया भी खुद इसकी व्याख्या करते हुए लिखते है कि "राम, कृष्ण और शिव ये कोई एक दिन के बनाएं हुए नहीं हैं। इनको आपने बनाया, इन्होनें आपको नहीं बनाया। आमतौर से तो आप यही सुना करते हो कि राम और कृष्ण और शिव ने हिंदुस्तान या हिंदुस्तानियों को बनाया। किसी हद तक, शायद, यह बात सही भी हो, लेकिन ज्यादा सही यह बात है कि करोड़ों हिंदुस्तानियों ने, युग-युगांतर के अंतर में, हजारों वर्षों में, राम, कृष्ण और शिव को बनाया। उनमें अपनी हंसी और सपने के रंग भरे और तब राम और कृष्ण और शिव जैसी चीजें सामने हैं।" [3] इस प्रकार डॉ. लोहिया स्पष्ट कहते है कि पिछले हजारों वर्षों में जो हमारे देश के पुरखों और हमारी समाज ने इन तीनों किंवदंतियों (राम, कृष्ण और शिव) को व्यापक और समृद्ध बनाए हैं, उसको हमें समझने की जरूरत है कि आखिर क्या कारण है कि लोगों के दिमाग में रचा-बसा है?

इसलिए डॉ. लोहिया कहते है कि 'किंवदंतियां किसी भी समाज का उसके दुःख और सपने के साथ उसकी चाह, इच्छा और आकांक्षाओं का प्रतीक हैं, तथा साथ-साथ जीवन के तत्व उदासीनता और स्थानीय व संसारी इतिहास की भी।' इसलिए राम, कृष्ण और शिव भारत की उदासी के साथ-साथ रंगीन सपने के भी प्रतीक हैं। उनकी कहानियों में एकसूत्रता ढूँढना या उनके जीवन में अटूट नैतिकता का ताना-बाना बुनना या असंभव व गलत लगने वाली चीजें अलग करना उनके जीवन का सब कुछ नष्ट करने जैसा होगा। यहाँ हमें किंवदंतियां और कथा में अंतर करना जरुरी है। किंवदंतियां कथा नहीं है। कथा हमें सीख देती है, वह शिक्षक के समान शिक्षा देता है। कथा का कलाकृति होना या मनोरंजक होना उसका मुख्य गुण नहीं है। जबकि किंवदंतियां सीख भी दे सकती है और मनोरंजन भी कर

सकती है। किंवदंतियां एक तरह से महाकाव्य और कथा, कहानी और उपन्यास, नाटक और कविता की मिली-जुली उपज है। इसलिए डॉ. लोहिया ने ठीक ही लिखा है कि 'किंवदंतियों में अपरिमित शक्ति है, जो समाज के दिमाग का अंश बन जाता है। इससे न केवल शिक्षित बल्कि अशिक्षित लोगों को भी सुसंस्कृत करने की ताकत होती है।' लेकिन अगर किंवदंतियों को समय, काल, परिस्थितियों के अनुसार सकारात्मक अर्थों में न लेकर नकारात्मक अर्थों में समझने लगते हैं तो यह व्यक्ति, समाज और राज्य के पतन का कारण भी हो सकता है। इस विचार को डॉ. लोहिया भली-भांति जानते थे इसलिए धर्म के सैद्धांतिक पक्ष के साथ-साथ व्यवहारिक पक्ष को भी महत्व प्रदान करते है। डॉ. लोहिया का कहना था कि किंवदंतियों का इतिहास में बहुत अधिक महत्व होता है। क्योंकि किंवदंतिया समाज का मानस बनाती है, इसलिए इनका न केवल सिर्फ अध्ययन होना चाहिए बल्कि, साहित्यकारों को इनका ऐसा उपयोग भी करना चाहिए जिससे समाज पर पड़ने वाले इनके कुप्रभाव दूर हो और लोगों में अन्धविश्वास के स्थान पर विवेक-बुद्धि जागे। इनका प्रयोग जनमानस के सुख-दुःख, हर्ष-उल्लास, आशा-निराशा को समझने के लिए करना चाहिए। डॉ. लोहिया राम, कृष्ण और शिव की व्याख्या इसी रूप में करते है। इसकी विस्तृत व्यख्या निम्नलिखित है-

मर्यादित-व्यक्तित्व

ऐसा कहा जाता है कि राम और कृष्ण, भगवान विष्णु के दो मनुष्य के रूप में अवतार लिए हैं। और इनका अवतार धरती पर धर्म का नाश और अधर्म की शक्ति का विस्तार होने पर होता है। इसके साथ यह भी माना जाता है की राम धरती पर त्रेता में आये जब धर्म का रूप इतना अधिक नष्ट नहीं हुआ था। राम को मर्यादित पुरुषोत्तम भी कहा जाता है। डॉ. लोहिया लिखते है कि "राम की सबसे बड़ी महिमा उनके उस नाम से मालूम होती है, जिसमें कि उन्हें मर्यादा पुरुषोत्तम कहकर पुकारा जाता है। जो मन में आया सो नहीं कर सकते। राम की ताकत बंधी हुई है, उसका दायरा खिंचा हुआ है। राम की ताकत पर कुछ नीति की या शास्त्र की या धर्म की या व्यवहार की या, अगर आप आज की दुनिया का एक शब्द ढूंढे तो, विधान की मर्यादा है।" [4] जिस तरह से विधानसभा या लोकसभा कोई कानून बनाकर व्यक्ति की स्वतंत्रता या अधिकार सीमित कर देती है, उसी प्रकार राम भी किसी-न-किसी कारणों से बंधित है, चाहे उनके पीछे वजह कुछ भी। इसलिए कभी-कभी पुराने लोग राम को आठ कलाओं और कृष्ण को सोलह कलाओं का अवतार मानते है। राम ने अपनी दृष्टि केवल एक महिला तक सीमित रखी, वह महिला सीता थी। उनकी कहानी बहुलांश राम की कहानी है। जिसमें सीता की शादी, अपहरण और कैद-मुक्ति और धरती की गोद में समा जाने के चारों ओर घूमता रहता है।

उन्मुक्त-व्यक्तित्व

कृष्ण द्वपर में जन्म लिए जब अधर्म चरम पर था। वे सोलह कलाओं में परिपूर्ण थे, इसलिए वह एक सम्पूर्ण पुरुष थे। जब विष्णु ने कृष्ण के रूप में अवतार लिया तो स्वर्ग में उनका सिंहासन बिल्कुल सूना था। लेकिन जब राम के रूप में आये थे, तो विष्णु अंशत: स्वर्ग में थे और अंशत: धरती पर। डॉ. लोहिया कृष्ण को उन्मुक्त व्यक्तित्व मानते थे, क्योंकि उनके ऊपर कोई मर्यादा नहीं था, उनके मन में जो आता था वही करते थे। उनके शक्ति की, कर्म की कोई सीमा नहीं थी। वह लिखते है कि "कृष्ण झूठ बोलते हैं, चोरी करते हैं, धोखा देते हैं, और जितने भी अन्याय के, अधर्म के काम हो सकते हैं, वे सब करते हैं। यहाँ तक कि जो कृष्ण के सच्चे भक्त होंगे, वह बिल्कुल बुरा नहीं मानेगें और जितना ही हम उनका चिढ़ाना चाहें, वे खुद अपने आप कह देंगे कि हाँ, वह तो माखनचोर थे और जरुर कृष्ण का कोई-न-कोई किस्सा सुना देंगे। अर्थात् जो कृष्ण के सच्चे उपासक हैं उनको तो मजा मिलता है कृष्ण के झूठ, दगा और धोखेबाजी और लंपटपन को याद करके। ऐसा क्यों? क्योंकि सोलह कला से परिपूर्ण हैं, मर्यादा नहीं है, सीमा नहीं है, विधान नहीं है, मन में आए सो करे।" [5] धर्म की विजय के लिए अधर्म से अधर्म करने को तैयार रहने का प्रतीक कृष्ण है। कब सूरज को छुपा दिया जबकि वह सचमुच नहीं छुपा था, कब एक जुमले के आधे हिस्से को जरा जोर से बोलकर और दूसरे हिस्से को धीमे से बोलकर झूठ बोल गए। इस तरह की चालबाजिया वे हमेशा किया करते थे, क्योंकि उनपर कोई मर्यादा नहीं था, उन्मुक्त व्यक्ति थे।

परंतु "धोखा, झूठ, बदमाशी और लंपटपन कृष्ण का, एक ऐसे आदमी का था, जिसे अपना कोई फायदा नहीं ढूँढना था, जिसे कोई लोभ नहीं था, जिसे इर्ष्या नहीं थी, जिसे किसी के साथ जलन नहीं थी, जिसे अपना कोई बढ़ावा नहीं करना था।" [6] बल्कि, उनका व्यक्तित्व अधर्म पर धर्म की, असत्य (झूठ) पर सत्य की, अकर्म पर कर्म की, गलती पर क्षमा की, घमंड पर कोमलता की, गुस्सा पर स्नेह और प्यार की, युद्ध पर शांति की, व्यक्तिगत स्वार्थ पर राज्यहित आदि की गौरव-गाथा है।

असीमित-व्यक्तित्व

राम और कृष्ण ने मानवीय जीवन बिताया परंतु शिव ने बिना जन्म और बिना अंत के है। संसार भर में ऐसी कोई किंवदती नहीं जिसकी न लम्बाई है, न चौड़ाई है और न मोटाई, जबकि शिव की किंवदती की कोई सीमा नहीं है। शिव का न कोई अपना है या न पराया। एक किस्सा बहुत मशहूर है कि, जब ब्रम्हा और विष्णु आपस में लड़ गए तो शिव ने उनसे कहा लड़ो मत जाओ, तुममें से एक मेरे सिर का पता लगाओ और दूसरा मेरे पैर का पता लगाओ और फिर लौटकर आकर मुझसे कहो। जो पहले पता लगा लेगा, उसकी जीत हो जाएगी। दोनों पता लगाने निकले, लाखों वर्ष के बाद ब्रह्मा और विष्णु दोनों लौटकर आए और शिव से बोले कि भगवान, पता नहीं लगा। तब शिव बोले फिर क्यों आपस में लड़ते हो? इसलिए डॉ. लोहिया शिव को असीमित व्यक्तित्व वाले मानते थे। डॉ. लोहिया लिखते है कि "दुनिया में जितने भी लोग हैं, चाहे ऐतिहासिक हो या किंवदती के, उन सबके कर्मों को समझने के लिए कर्म और फल, कारण और फल देखना पड़ता है। उनके जीवन में ऐसी घटनाएं है कि जिन्हें एकाएक नहीं समझा जा सकता। उन घटनाओं को समझने के लिए पहले का कारण ढूँढना पड़ता है और बाद का फल ढूँढना पड़ता है। तब जा करके वे सही मालूम पड़ता है। जबकि शिव ही एक ऐसी किवंदंती है जिसका हरेक काम, खुद अपने औचित्य को अपने-आप में रखता है। कोई भी काम आप शिव का ढूंढ लो, वह उचित काम होगा। उनके लिए पहले की कोई कड़ी नहीं ढूंढनी पड़ेगी और न बाद की कोई कड़ी। राम के लिए जरूरत पड़ेगी, कृष्ण के लिए जरूरत पड़ेगी, दुनिया के हरेक आदमी के लिए इसकी जरूरत पड़ेगी, और जो दुनिया-भर के है उनके लिए जरूरत पड़ेगी। क्यों उसने ऐसा किया? पहले की बात याद करनी होगी कि क्या बातें हुई, क्या कारण था, किसलिए उसका यह काम हुआ और फिर उसके क्या नतीजे निकले। हमेशा दूसरे लोगों के बारे में कर्म और फल की एक पूरी कड़ी बंधती है। लेकिन ढूंढने पर भी, शिव का ऐसा कोई काम नहीं मालूम पड़ा कि मैं कह सकू कि उन्होंने क्यों ऐसा किया, खोजो उसका क्या कारण था, और क्या परिणाम निकला।" [7] इस प्रकार शिव असीमित व्यक्तित्व है जिसे न देश बांध सकता है और न काल। वे जो कुछ करते है उसका औचित्य न अतीत में ढूंढा जा सकता, न वर्तमान में, और न ही भविष्य में। वह भस्म और भस्मासुर बना सकते, बिना किसी बात की चिंता किए कि, यह एक दिन उन्हीं के पीछे पड़ जाएगा।

इस प्रकार हम देखे तो हिंदुस्तान के देव और अवतार अपनी मिट्टी के साथ जुड़े है। त्रेता का राम हिंदुस्तान की उत्तर-दक्षिण एकता का देव है। द्वापर का कृष्ण देश की पूर्व-पश्चिम एकता का देव है। राम उत्तर-दक्षिण और कृष्ण पूर्व-पश्चिम धुरी पर घुमे। कभी-कभी तो लगता है कि देश को उत्तर-दक्षिण और पूर्व-पश्चिम एक करना ही राम और कृष्ण का धर्म था। अगर यह मान भी लिए जाय की राम और कृष्ण के किस्से तो मनगढंत गाथाएँ है, फिर हम देखे तो इन गाथाओं ने इतने बड़े देश को या उत्तर-दक्षिण और पूर्व-पश्चिम को एक सूत्र में बांधने का विलक्षण प्रयास किया है। जहाँ महाभारत हिंदुस्तान की पूर्व-पश्चिम की यात्रा है, वही रामायण उत्तर-दक्षिण यात्रा का। पूर्व-पश्चिम का नायक कृष्ण है, वही उत्तर-दक्षिण के नायक राम है। मणिपुर से द्वारका तक कृष्ण या उसके सहचरों का पराक्रम हुआ है, वही जनकपुर से श्रीलंका तक राम या उनके सहचरों का। राम का काम अपेक्षाकृत सहज था। राम के काम में एकरसता अधिक था। राम का मुकाबला या दोस्ती हुई भील, किरात, किन्नर, राक्षस आदि से, जो उसकी अपनी सभ्यता से अलग थे।

राम का काम था इनको अपने में शामिल करना और उनको अपनी सभ्यता में ढाल देना, चाहे हराए बिना या हराने के बाद। राम के उपासक, शायद बहुत बुरा काम नहीं करेंगे, क्योंकि बुराई करने में भी वे मर्यादा से बंधे हैं और अच्छाई करने में भी मर्यादा से बंधे हुए है, अर्थात् दोनों तरफ से बंधे हुए हैं। शिव या कृष्ण में इस तरह का बंधन नहीं है।

कृष्ण का वास्ता पड़ा अपने ही लोगों से। एक ही सभ्यता के दो अंगों में से एक को लेकर भारत की पूर्व-पश्चिम एकता कृष्ण को स्थापित करनी पड़ी। इस काम में पेंच ज्यादा थे। तरह-तरह की संधि और विग्रह का क्रम चला। न जाने कितनी चालाकियां और धूर्तताएं भी हुई। इस क्रम में राजनीति का निचोड़ भी सामने आया, जो फिर कभी नहीं आया। कृष्ण किसी भी नीति के बंधन का मामला नहीं है। वे उन्मुक्त व्यक्तित्व के है।

शिव अगर नीलकंठ है और दुनिया के लिए अकेले जहर को अपने गले में बांध सकते हैं, तो उसके साथ-साथ धतूरा खाने और पीने वाले भी हैं। शिव की दोनों तस्वीरें साथ-साथ जुड़ी हुई है। वे असीमित व्यक्तिव के है। शिव की हर एक घटना या काम का औचित्य उसके अंदर है। हिंदुस्तान में करोड़ो लोग समझते है कि शिव धतूरा खाते है, शिव की सेना में लूले-लंगड़े है, उसमें जानवर भी है, भूत-प्रेत भी हैं, और सब तरह की बाते जुड़ी हुई हैं। इसलिए शिव के प्रति समाज के कमजोर वर्ग का जुड़ाव ज्यादा है। इस तरह कमजोर को ध्यान में रखकर न्याय और अन्याय के बीच के अंतर शिव के जीवन से हम भली- भांति समझ सकते हैं।

इस प्रकार डॉ. लोहिया हिंदुस्तान के नक्शे को तीन हिस्से बनाते है। एक नक्शा वह, जहाँ राम की आराधना होती है, दूसरा वह है, जहाँ कृष्ण सबसे ज्यादा पूजे जाते है, और तीसरा भाग वह है जहाँ शिव को अपना आराध्य देव मानते हैं। इसलिए डॉ. लोहिया लखते है कि "मैं केवल इतना कहूँगा: ऐ भारत-माता, हमें शिव का मस्तिष्क दो, कृष्ण का हृदय दो तथा राम का कर्म और वचन दो। हमें असीम मस्तिष्क और उन्मुक्त हृदय के साथ-साथ जीवन की मर्यादा से रचो।" [8] जिससे एक आदर्श मानव व समाज की परिकल्पना की जा सके।

डॉ. लोहिया: सगुण और निर्गुण धर्म

धर्म-दर्शन और वैचारिक चिंतन के क्षेत्र में डॉ. लोहिया का सर्वाधिक मौलिक योगदान है, सगुण और निर्गुण की व्याख्या। यह शब्द उन्होंने भारतीय दर्शन से लिया परंतु उसका वर्णन इस प्रकार की, कि पूर्व और पश्चिम की सभी दर्शन प्रणालियों से उनकी सोच अलग हो गई। यहाँ तक की गाँधी से भी, जिनसे वह बहुत प्रभावित थे। उनका कहना था कि सगुण और निर्गुण का द्वंद सभी दर्शन-प्रणालियों में रहा है, हालांकि सगुण-निर्गुण के लिए अलग-अलग शब्दों का प्रयोग हुआ है। मूर्त-अमूर्त, माया (जगत) और ब्रह्म, तात्कालिक और दूरगामी लक्ष्य, साधन और साध्य, सिद्धांत और कार्यक्रम ये सभी शब्द सगुण-निर्गुण के पर्याय हैं। डॉ. लोहिया अपनी इस दूसरी पुस्तक 'सगुण और निर्गुण धर्म पर एक दृष्टि' में लिखते है कि "दुनिया में हरेक वस्तु के दो रूप होते हैं, एक सगुण और दूसरा निर्गुण; एक साधारण तथा व्यापक ओर दूसरा ठोस। ऐसा कोई उसूल नहीं है, जिसके यह दो रूप नहीं होते हो। सिर्फ धर्म या दर्शन में ही सगुण और निर्गुण नहीं हुआ करते। वहाँ तो ब्रह्म को सगुण और निर्गुण कहाँ गया है; दोनों शक्लों को अलग-अलग बताने की कोशिश की गई है।" [9] वह हिन्दू-धर्म को सभी धर्मो में श्रेष्ठ बताते हुए कहते है कि उसकी श्रेष्ठता इस बात में है कि इस धर्म के मानने वाले खुलकर अपने को दूसरों से श्रेष्ठ नहीं कहते। डॉ. लोहिया कहते हैं कि "मैं जो थोड़ा बहुत हिंदू धर्म को समझ पाया हूँ, उसमें यही एक विशेषता है। बाकी और धर्म वाले तो आसानी से अपने मुंह में ले आया करते हैं कि वे सबसे अच्छे हैं। सही हिंदू, वह ज्यादा से ज्यादा कभी अपने पुरखों के बड़प्पन को बताएगा तो वह यह कह देगा कि बड़प्पन की उस ऊंचाई तक हम लोग पहुंचे जिससे ज्यादा ऊंचे और कोई नहीं पहुंच सके। मतलब दूसरों को भी मौका दो कि शायद वे लोग पहुंचे हों।" [10] आगे और स्पष्ट वर्णन करते हुए वे लिखते है कि "मेरा कहना है कि भारत के सांस्कृतिक विकास की एक विशेषता यह है कि यहाँ दर्शन का विकास पहले हुआ, संघबद्ध धर्म का जन्म उसके बाद हुआ। बौद्ध धर्म भारत का, और संसार का, पहला संघबद्ध धर्म था। गौतम बुद्ध से पहले उपनिषदों में और उनके अतिरिक्त यहाँ के भौतिकवादी दर्शन में यथार्थवादी विचारधारा का यथेष्ट विकास हो चुका था। इसका एक परिणाम यह हुआ कि जितने धर्म संस्थापक थे, वे किसी भी धर्म के हो, यह कहते थे कि हमारा धर्म तर्क द्वारा सत्य सिद्ध किया जा सकता है। तर्क से प्रमाणित हो तो इसे स्वीकार करो अथवा उसे अस्वीकार करो। इस तरह की बातें अन्य देशों के धर्मों में नहीं कहीं गई। इसका श्रेय धर्म को नहीं, भारतीय धर्म-दर्शन की परम्परा को है।" [11]

डॉ. लोहिया उपनिषदों की प्रशंसा करते हुए कहते हैं कि "जितना मजा मुझे उपनिषद के दर्शन में आया, उतना शायद या ऐसा कहूँ उससे ज्यादा और कभी नहीं आया।" [12] परंतु इस उपनिषद के दर्शन का व्यावहारिक पक्ष उनकी आँखों से ओझल रहता है। भारत में जितने समाज समाज सुधारक हुए हैं, वे कहीं-न-कहीं वेदांत की विचारधारा से जुड़े रहे हैं। इस संदर्भ में यह उल्लेख करना आवश्यक है कि डॉ. लोहिया को भारतीय इतिहास की जड़ अपरिवर्तनशील दिखाई देता है क्योंकि उनकी दृष्टि में यह इसलिए हुआ कि वेदांत और व्यवहार का संबंध टूट गया है, जबकि भारतीय दर्शन की एक विशेषता यह है कि वह मनुष्य के व्यवहार से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित रहा है। डॉ. लोहिया वेदांत और व्यवहार के आपसी सम्बन्ध को जुड़ाव नहीं देखते। यह सम्बन्ध टूटा हुआ है।

अनेक समाज सुधारकों ने पौराणिक अंधविश्वासों के विरुद्ध संघर्ष किया है। कुछ विद्वानों ने पुराण-कथाओं में निहित वेदांत के सत्य उद्घाटित भी किये हैं। लोहिया इन दोनों प्रवृतियों से दूर रहते हैं। वह पुराण-कथाओं को ज्यों का ज्यों स्वीकार करते हैं, और इन कथाओं के दो पहलू देखते हैं- एक उदासी वाला पक्ष और दूसरा रंगीन सपनों वाला पक्ष। राम, कृष्ण और शिव भारत की उदासी और साथ-साथ रंगीन सपने हैं। धर्म से राजनीति का अटूट संबंध मानते हुए लोहिया कहते हैं कि "धर्म और राजनीति, ईश्वर और राष्ट्र या कौम हर जमाने में और हर जगह मिल कर चलते हैं।" [13] इस तरह राजनीति को धर्म से अलग नहीं किया जा सकता, न पहले कभी इन दोनों का अलगाव हुआ है और न आगे कभी होगा। परंतु, डॉ. लोहिया का कहना था कि वर्तमान समय में धर्म और राजनीति का रिश्ता बिगड़ गया है। जबकि 'धर्म दीर्घकालीन राजनीति है और राजनीति अल्पकालीन धर्म।' वे कहते थे कि, धर्म श्रेयम् की उपलब्धि का प्रयत्न करता है, राजनीति बुराई से लड़ती है। हम आज एक दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति में है, जिसमें कि बुराई से विरोध की लड़ाई में धर्म का कोई वास्ता नहीं रह गया है और वह निर्जीव हो गया है जबकि राजनीति अत्यधिक कलही और बेकार हो गया है। धर्म और राजनीति के बीच के सूक्ष्म सम्बन्ध की व्याख्या करते हुए, वह स्पष्ट लिखते है कि "धर्म और राजनीति के दायरे अलग रखना ही अच्छा है, लेकिन यह समझते हुए कि दोनों कि जड़े एक हैं। धर्म दीर्घकालीन राजनीति है, राजनीति अल्पकालीन धर्म है। एक ही वस्तु के दो स्वरूपों, एक अल्पकाल और दूसरा दीर्घकाल, के भेद का एक नतीजा अवश्य होता है। लंबान में काल शांत है। अल्प में काल रूद्र है। दोनों का तात्पर्य एक है। धर्म, जो दीर्घकाल है, अच्छाई करता है और अच्छाई की स्तुति। राजनीति जो अल्पकाल है, बुराई से लड़ती है और बुराई की निंदा करती है। अच्छे की स्तुति और बुरे की निंदा, अच्छाई करने और बुरे से लड़ने में फर्क है। जब फर्क बढ़ जाता है और एक-दूसरे से सम्पर्क टूट जाता है, तब अच्छे की स्तुति निर्जीव हो जाती है और बुरे की निंदा कलही हो जाती है। अच्छे-से-अच्छे धर्म के सामने खतरा है कि वह अर्ध-मुर्दा हो जाए। अच्छी-से-अच्छी राजनीति को खतरा है कि वह झगड़ालू बन जाए। यहाँ चर्चा बुरे धर्म और बुरी राजनीति की नहीं हैं। जब धर्म बुरा बनता है, वह झगड़ालू बनता जाता है। जब राजनीति बुरी बनती है, वह मुर्दा होकर श्मशान-शांति अपनाती है।" [14]

इसलिए डॉ. लोहिया कहते है कि, धर्म वाले लोगों को हक है कि वे मनुष्य का ध्यान अधिक टिकाऊ बातों की तरफ खीचें। इस तरह के हक़ के कौन-कौन-से नतीजे निकलेंगे? एक नतीजा साफ है आस्तिकता। लेकिन यह जरूरी नहीं है कि धर्म की आस्तिकता को राजनीति स्वीकार ही करे। राजनीति एक आश्वासन जरुर दे कि, वह आस्तिकता अथवा नास्तिकता के प्रचार में दण्ड का इस्तेमाल नहीं करेगी। साथ ही धर्म वालों को आश्वस्त होना चाहिए कि व्यक्तिगत पूंजी के खत्म होने के बाद भी मंदिर-मस्जिद करोड़ों लोगों के छोटे पैसें से चलेगें, अगर इन करोड़ो लोगों का मन लुभाता रहता है। फिर शायद, नास्तिकता और आस्तिकता

का समावेश करने वाली कोई नई चीज निकल रही है।

निष्कर्ष

उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि, डॉ. लोहिया मर्यादित, उन्मुक्त और असीमित व्यक्तित्व अर्थात् राम, कृष्ण और शिव को हिंदुस्तान की तीन जीवन-शैलियों के प्रतीक मानते है, जो न केवल भारत के उत्तर-दक्षिण, पूर्व-पश्चिम के एकता के परिचायक हैं, बल्कि करोड़ों लोगों के व्यवहारिक जीवन के कर्मों पर उनका व्यापक असर पड़ता है। परंतु, फिर भी न केवल अकादमी, के साथ-साथ शैक्षणिक, राजनीति एवं बौद्धिक सामाजिक जगत द्वारा जो इन्हें आधार प्रदान किया जाना चाहिए, कहीं-न-कहीं उसमें असफलता मिली है, चाहे यह असफलता अनजाने में मिली हो या जान-बूझकर। यह एक शोध का प्रश्न है। इसलिए हमें इन प्रश्न पर विचार करने की आवश्यकता है। यह आवश्यक इसलिए भी है, क्योंकि यह तीनों जीवन-शैलियों (राम, कृष्ण और शिव) से न केवल शिक्षित समुदाय, बल्कि अशिक्षित समुदाय भी शिक्षित होते है।

जहाँ तक सगुण और निर्गुण धर्म का प्रश्न है, हमें सिर्फ इसे धर्म-दर्शन तक ही सीमित नहीं रखना चाहिए, बल्कि आध्यात्मिकता के साथ-साथ लौकिक जीवन के मूल्यों के चीजों को भी इन मानदंड के साथ देखने की जरूरत है। तभी वास्तव में हम धर्म और राजनीति के अत: सम्बन्ध के व्यापक व्यवहारिक पक्ष को समझ सकते है। क्योंकि आज जिस तरह से धर्म और राजनीति के बीच का सम्बन्ध टूटता जा रहा है। जो मानवता के लिए एक बहुत बड़ा खतरा बना हुआ है। जब तक हम धर्म को दीर्घकालीन राजनीति और राजनीति को अल्पकालीन धर्म के बीच के सूक्ष्म सम्बन्ध को नहीं समझेगें, हम धर्म और राजनीति के अर्थ को अपने हित के कारण निर्जीव आधार प्रदान करते रहेंगे। इस प्रकार डॉ. लोहिया भारतीय इतिहास के अपरिवर्तनशील जड़ को वेदांत और व्यवहार, धर्म और राजनीति, अध्यात्मिक और लौकिक और मर्यादित, उन्मुक्त और असीमित व्यक्तित्व के बीच अतः स्थापित कर जाति-विहीन, वर्ग-विहीन आदर्श समाज की कल्पना करते हैं।

संदर्भ सूची

1. कपूर, मस्तराम, 'राममनोहर लोहिया रचनावली', 2008, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूशन (प्रा.) लि.,पृष्ठ-39
2. पृष्ठ कपूर, मस्तराम, 'राममनोहर लोहिया रचनावली', 2008, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूशन (प्रा.) लि.,पृष्ठ-39-40
3. वही, पृष्ठ-41
4. कपूर, मस्तराम, 'राममनोहर लोहिया रचनावली', 2008, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूशन (प्रा.) लि.,पृष्ठ-39
5. पृष्ठ कपूर, मस्तराम, 'राममनोहर लोहिया रचनावली', 2008, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूशन (प्रा.) लि.,पृष्ठ-43
6. कपूर, मस्तराम, 'राममनोहर लोहिया रचनावली', 2008, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूशन (प्रा.) लि.,पृष्ठ-43
7. पृष्ठ कपूर, मस्तराम, 'राममनोहर लोहिया रचनावली', 2008, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूशन (प्रा.) लि.,पृष्ठ-46-47
8. पृष्ठ कपूर, मस्तराम, 'राममनोहर लोहिया रचनावली', 2008, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूशन (प्रा.) लि.,पृष्ठ-70
9. वॉ कपूर, मस्तराम, 'राममनोहर लोहिया रचनावली', 2008, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूशन (प्रा.) लि.,वोल्यूम-4, पृष्ठ-7
10. लोहिया, धर्म पर एक दृष्टि,पृष्ठ-22-23
11. लोहिया, राममनोहर, 'सगुण और निर्गुण धर्म पर एक दृष्टि', पृष्ठ-21
12. वही,
13. वही, पृष्ठ-16
14. लोहिया रचनावली-99